इकाई 9 काव्यालंकार : स्वरूप एवं प्रकार

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 अलंकार का अर्थ

9.3 अलंकार के प्रकार

9.4 शब्दालंकार : परिभाषा एवं प्रकार

9.4.1 प्रमुख शब्दालंकार

9.5 अर्थालंकार

9.6 प्रमुख अर्थालंकार

9.7 पाश्चात्य अलंकार

9.8 सारांश

9.9 अवधारणात्मक शब्द

9.10 उपयोगी पुस्तकें

9.11 बोध प्रश्न

9.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- काव्यालंकार के संबंध में जान सकेंगे,
- शब्दालंकारों को समझ सकेंगे,
- अर्थालंकारों को समझ सकेंगे, और
- पाश्चात्य काव्य अलंकारों के विषय में जान सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

काव्य के सौन्दर्य और विशेषताओं को प्रकट करने के लिए अनेक मानदण्ड स्थापित किए गये हैं। भारतीय एवं पाश्चात्य चिंतकों ने काव्य के सौन्दर्य को अपने-अपने ढंग से ढूंढा है। काव्य में अलंकार का प्रमुख स्थान है। गद्य हो अथवा पद्य सभी में साहित्यकारों ने अलंकार का प्रयोग किया है। काव्य में अलंकारों का प्रयोग, भिन्न-भिन्न स्थितियों में अलग-अलग किया जाता है।

BHDC-106.indd 110 19-03-2021 08:51:36

जिस प्रकार से किसी रमणी की शोभा अलंकार (आभूषण) के बिना अधूरी है, उसी प्रकार काव्य की शोभा को बढ़ाने के लिए भी अलंकार का प्रयोग अति आवश्यक है। जब कभी हम किसी प्रभाव को स्पष्ट करते हैं तब अत्युक्ति, हेतु-कल्पना आदि अलंकारों के प्रयोग द्वारा हम बल प्रदान करते हैं।

अलंकारों का प्रयोग हम संज्ञा, क्रिया, विशेषण आदि को चमत्कृत करने के लिए करते हैं।

जब हम कथ्य में किसी की स्तुति अथवा निन्दा या व्यंग्य द्वारा अपनी बात कहते हैं तो वहाँ अलंकार उसे अभिव्यक्त करने में सहायक होता है।

काव्य में जब किसी वस्तु अथवा चरित्र को प्रकट करना चाहते हैं, वहाँ अप्रस्तुत के लिए भी अलंकार का प्रयोग किया जाता है।

शब्द की ध्वनि और अर्थ को चमत्कार पूर्ण बनाने में भी अलंकारों का प्रयोग किया जाता है। वास्तव में अलंकार साधारण कथन को मनोहरता प्रदान करता है। सामान्य बात भी अलंकार के द्वारा महत्वपूर्ण बन जाती है। जिस उक्ति में कहीं पर भी ललित भंगिमा मिलती है, वही उक्ति अलंकार बन जाती है।

काव्य को समग्र सौन्दर्य अलंकार ही प्रदान करता है अथवा हम कह सकते हैं कि काव्य के सौन्दर्य की वृद्धि करने वाले तत्व को अलंकार कहते हैं। अलंकार वाणी के आभूषण हैं।

कथन की विचित्र भंगिमा अलग-अलग समय में भिन्न-भिन्न होती है। अतः अलंकार भी विविध इंद्रधनुषी आभा सम्पन्न होता है। वर्ण्य विषय के अनुरूप अलंकारों का रंग हल्का और गहरा होता रहता है।

काव्य के गुण, रस, वस्तु विन्यास, रचनाकार के मन्तव्य के अनुसार अलंकार की सीमा में समाविष्ट हो जाते हैं। भावों का उत्कर्ष दिखाने के लिए एवं वस्तुओं के गुण, क्रिया का तीव्रता से अनुभव कराने में अलंकार ही सहायक होते हैं।

9.2 अलंकार का अर्थ

अलंकार शब्द मूलतः 'अल्' संज्ञा से बना है। अलम्+कृ+घत्र् प्रत्यय अर्थात् अलंक्रियते अनेन इति अलंकारः।

'अलं' से तात्पर्य भूषण और 'कार' का अर्थ हैं– करने वाला, काव्य को आभूषित करने वाला उपकरण अलंकार है।

अलंकार की व्युत्पत्तिमूलक परिभाषा देते हुए अनेक भारतीय आचार्यों ने उसे अपने-अपने ढंग से व्याख्यायित किया। आचार्य वामन ने अलंकार की परिभाषा देते हुए संकेत किया है–

'करणव्युत्पत्या पुनरलंकार शब्दोडयम् उपमादिशु वर्तते

आचार्य वामन सौन्दर्य को अंलकार का पर्यायवाची मानते हैं। अलंकार गुणों को उत्कृष्टता प्रदान करते हैं तथा सौन्दर्य में वृद्धि करते हैं– 'सौन्दर्यमलंकारः'

आचार्य दण्डी ने अलंकार को काव्य के शोभा– कारक धर्म के रूप में माना है–

'काव्यशोभाकरान् धर्मानलंकारान् प्रचक्षते'

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

रुद्रट ने– 'अभिधानप्रकार विशेषा एव चालंकाराः' कहा है। ध्वन्यालोककार आचार्य आनन्दवर्धन अलंकार को काव्य की बाह्य शोभा ही मानते हैंः

'अलंकारोहि बाह्यालंकार साम्यादंगिनश्चासत्वहेतुरूपयते'

आचार्य मम्मट ने भी ध्वन्यालोककार की ही भांति अलंकार को बाह्य शोभा का उपकरण अर्थात् हार, कुण्डल की ही भांति माना है। काव्य में कमनीयता एवं चारुता उत्पन्न करने में अलंकार का विशेष योगदान माना है।

काव्य में सर्वाधिक महत्वपूर्ण अलंकार को मानते हुए जयदेव ने कहा है–

'अंगीकरोति यः काव्यं शब्दार्थवनलंकृती'

असौ न मन्यते कस्मादनुष्णमनलं कृती।

अर्थात् यदि कोई काव्य को अलंकार रहित मानता है तो स्वयं को विद्वान मानने वाला वह व्यक्ति अग्नि को उष्णतारहित क्यों नहीं मानता?

आचार्य विश्वनाथ; जो रसवादी आचार्य हैं उन्होंने अलंकार को साध्य न मानकर साधन माना है तथा रस की वृद्धि में सहायक माना है।

'शब्दार्थयोर स्थिराः ये धर्मा शोभातिषायिनः

रसादीनुपकुर्वन्तोडलंकारास्तेड दादिवत्।'

भामह, दण्डी, जयदेव आदि अलंकारवादी आचार्यों ने अंलकार को काव्य की आत्मा माना है। आचार्य भम्मट; विश्वनाथ आदि रसवादी आचार्यों ने अंलकार को काव्य के आत्मभूत रस में सहायक माना है।

हिंदी साहित्य के रीतिकालीन आचार्य केशवदास ने अंलकार को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना है। उनका कहना है–

'जदपि जाति सुलक्षणी, सुबरन सरस सुवृत्त

भूषण बिना न सोहई, कविता बनिता मित्त।'

सुमित्रानन्दन पंत ने 'पल्लव' की भूमिका में भी अलंकार को काव्य का साधन नहीं बल्कि साध्य माना है। ये काव्य की बाह्य शोभा को बढ़ाने वाले हैं।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अलंकार की परिभाषा इस प्रकार दी है –

'भावों का उत्कर्ष दिखाने और वस्तुओं के रूप, गुण, और क्रिया का अधिक तीव्र अनुभव कराने में कभी-कभी सहायक होने वाली उक्ति अलंकार है।'

अलंकार शब्दार्थ की वह विशिष्ट कलात्मक रचना है, जो अर्थ को उत्कर्ष प्रदान करता हुआ पाठक में उसके द्वारा चमत्कृति, विमुग्धतारंजन आदि भावों को व्यक्त करता है। अलंकार, रचना की मूल चेतना से जुड़कर, उसे प्रेषणीय बनाकर कवि कर्म को सार्थकता प्रदान करते हैं।

BHDC-106.indd 112 19-03-2021 08:51:36

9.3 अलंकार के प्रकार

काव्य की शोभा बढ़ाने वाले तत्वों को अलंकार कहते हैं। मुख्यतः अलंकार के तीन प्रकार हैं–

1) शब्दालंकार

2) अर्थालंकार

3) उभयालकार

जब कुछ विशेष शब्दों के कारण काव्य में चमत्कार उत्पन्न होता है, तो वहाँ शब्दालंकार होता है।

जहाँ कथन में अर्थगत सौन्दर्य होता है, उसे अर्थालंकार कहते हैं।

कहीं-कहीं कथन में शब्दगत और अर्थगत दोनों प्रकार का सौन्दर्य होता है तो वहाँ उभयालंकार होता है।

9.4 शब्दालंकार : परिभाषा एवं प्रकार

जिस अलंकार में शब्दों के द्वारा कोई चमत्कार उत्पन्न होता है और उन शब्दों की जगह यदि समानार्थी दूसरे शब्दों को रखने से वह चमत्कार समाप्त हो जाता है अर्थात् भाषा के सौन्दर्य को बढ़ाने वाले शब्दालंकार होते हैं। यथा–

'कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि।
कहत लखन सन राम हृदय गुनि।'

शब्दालंकार के प्रमुख रूप हैं–

1) अनुप्रास

2) यमक

3) वक्रोक्ति

4) श्लेष

5) चित्र

6) पुनरुक्ति

7) वीप्सा

9.4.1 प्रमुख शब्दालंकार

1) अनुप्रास

वर्णों की आवृत्ति को अनुप्रास कहते हैं अर्थात् जहाँ बार-बार समान वर्णों की आवृत्ति हो वहाँ अनुप्रास अलंकार होता है। अनु अर्थात् बार-बार एवं प्रास अर्थात् पास-पास रखना।

BHDC-106.indd 113 19-03-2021 08:51:36

अनुप्रास के पाँच भेद होते हैं–

1) छेकानुप्रास
2) वृत्यनुप्रास
3) श्रुत्यनुप्रास
4) लाटानुप्रास
5) अन्त्यानुप्रास

छेकानुप्रास : जहाँ एक या अनेक वर्णों की आवृत्ति केवल एक बार होती है, वहाँ छेकानुप्रास होता है। यथा–

'बांधे द्वारा काकरी, चतुर चित्त याकरी
पाप को पिनाकरी न जाने नाक नाकरी'

यहाँ काकरी, याकरी, पिनाकरी, नाकरी आदि की एक बार आवृत्तियों के कारण छेकानुप्रास अलंकार है।

वृत्यनुप्रास : जहाँ पर एक ही वर्ण या अनेक वर्णों की आवृत्ति दो या दो से अधिका बार हो, वहाँ वृत्यनुप्रास होता है। उदाहरण–

विधन विदारण विरद वर, वास वदन विकास
वर दे बहु बाढ़े विसद, वाणी बुद्धि विलास

श्रुत्यनुप्रास : जहाँ कंल, तालु आदि किसी एक ही आवृत्ति होती है, वहाँ श्रुत्यनुप्रास होता है यथा–

'तुलसीदास सीदत निसिदिन देखत तुम्हारि निबुराई'
यहाँ त, द, र, न की आवृत्ति हुई है।

लाटानुप्रास : जहाँ पर शब्द और अर्थ एक ही रहते हैं; किन्तु अन्य पद के साथ अन्वय करने पर अर्थ भिन्न हो जाता है वहाँ लाटानुप्रास होता है। यथा–

'वे घर हैं वन ही सदा जो है, बंधु वियोग
वे घर हैं वन ही सदा जो नहिं बंधु वियोग।'

अन्त्यानुप्रास : जब छंद के अंतिम चरण में स्वर या व्यंजन की समता हो; वहाँ अन्त्यानुप्रास होता है। यथा–

कुन्द इन्दु सम देह, उमा-रमण करुणा-अयन।
जाहि दीन पर नेह, करहु कृपा मर्दन मयन।

2) यमक अलंकार

भिन्न-भिन्न अर्थों को प्रकट करने वाले समान शब्दों या वाक्यों की क्रमशः आवृत्ति को यमक अलंकार कहते हैं। यथा–

कनक-कनक ते सौ गुनी, मादकता अधिकाय
या खाए बौराय जग, वा पाए बौराय।

BHDC-106.indd 114 19-03-2021 08:51:36

यहाँ कनक शब्द दो बार प्रयुक्त हुआ है किन्तु उसका अर्थ भिन्न-भिन्न है अतः यमक अलंकार है।

3) श्लेष अलंकार

जहाँ एक शब्द से अनेक अर्थों की व्यंजना हो, वहाँ श्लेष अलंकार होता है। यथा–

'अजौं तर्‌यौना ही रहयो, श्रुति सेवत इक रंग
नाक बास बेसरि लह्यो; बसि मुकतनि के संग'।

यहाँ 'तर्‌यौना' एक ही शब्द है, जिसके दो अर्थ हैं– पहला; कान में पहनने वाला आभूषण तथा दूसरा तर्‌यो+ना अर्थात् नहीं तरा, उसी अवस्था में ही रहा।

श्लेष का दूसरा उदाहरण–

'रहिमन पानी राखिए; बिन पानी सब सून,
पानी गए न ऊबरे; मोती, मानुष चून।'

यहाँ 'पानी' शब्द के तीन अर्थ हैं– मोती के पक्ष में चमक, मनुष्य के पक्ष में प्रतिष्ठा एवं आटे के पक्ष में जल। अतः यहाँ श्लेष अलंकार है।

वक्रोक्ति : जहाँ कंठ की विशेष ध्वनि के कारण अर्थ की जगह दूसरा अर्थ कल्पित किया जाए वहाँ वक्रोक्ति होती है। यथा–

'हैं री सखी कृष्णचंद्र? चन्द्र कहूँ कृष्ण होत?
तब हंसि राधे कही मोरपच्छवारे हैं?'

चित्रालंकार : जब शब्दों का इस प्रकार प्रयोग किया जाता है, जिससे विशेष चित्र बन जाते हैं। इसमें वर्ण की व्यवस्था का वैचित्रय होता है।

पुनरुक्ति : भावको अधिक प्रभावपूर्ण बनाने के लिए जब एक ही बात को बार-बार कहा जाए, वहाँ पुनरुक्ति अलंकार होता है–

उदाहरण– निर्मल जल अन्तस्तल भर के
उछल-उछल कर छल-छल करके
थल-थल तरके कल-कल झरके।

उपर्युक्त उदाहरण में उछल-उछल, छल-छल, थल-थल एवं कल-कल शब्दों के प्रयोग से भाव अधिक रुचिकर बन गया है अतः यहाँ पुनरुक्ति अलंकार है।

'मधुमास में दासजू बीस बिसे मनमोहन आइ हैं आइ हैं आइ हैं उजरे इन भौनन को सजनी सुख पुंजन छाइ हैं छाइ हैं छाइ हैं अब तेरी सों ऐरी न सक एकक विथा सब जाइ हैं जाइ हैं जाइ हैं घनश्याम प्रभा लखिकै सखियाँ अंखियाँ सुख पाइ हैं पाइ हैं पाइ हैं। उक्त उदाहरण की प्रथम पंक्ति में आइ हैं, द्वितीय पंक्ति में छाइ हैं, तृतीय में जाइ हैं एवं अंतिम पंक्ति में पाइ हैं शब्दों के बारम्बार कथन से उक्ति में प्रभावात्मकता आई है अतः पुनरुक्ति अलंकार है।

वीप्सा : जब किसी आकस्मिक भाव को प्रभावित करने के लिए शब्दों की आवृत्ति की जाए तो वहाँ वीप्सा अलंकार होता है यथा –

BHDC-106.indd 115 19-03-2021 08:51:36

शिव शिव शिव! कहते हो यह क्या, ऐसा फिर मत कहना।

राम राम! यह बाट भूलकर मित्र कभी मत गहना।

यहाँ पर शिव शिव शिव अथवा राम राम शब्दों के द्वारा 'घृणा' आकस्मिक भाव के आने से शब्दों के द्वारा 'घृणा' आकस्मिक भाव के आने से शब्दों की आवृत्ति हुई है अतः यहाँ वीप्सा अलंकार है।

'बहू, तनिक अक्षत रोली तिलक लगा दूं, माँ बोली

जियो, जियो, बेटा आओ, पूजा का प्रसाद पाओ।

उपर्युक्त उदाहरण में जियो-जियो आदरसूचक भाव आकस्मिक रूप से प्रकट हुआ है अतः शब्दों की आवृत्ति द्वारा वीप्सा अलंकार है।

पुनरुक्ति अलंकार द्वारा वक्तव्य की पुष्टि होती है और वीप्सा द्वारा मन का आकस्मिक भाव स्पष्ट होता है। यही पुनरुक्ति अलंकार और वीप्सा अलंकार में अंतर होता है।

9.5 अर्थालंकार

प्रमुख अर्थालंकार का परिचय

जिन शब्दों द्वारा जिस अलंकार की सृष्टि होती हो, उन शब्दों के बदलने पर भी वह अलंकार बना रहे, वो अर्थालंकार होता है। 'अग्निपुराण' में कहा गया है, जो अर्थों को अलंकृत करते हैं वे अर्थालंकार हैं।

प्रमुख अर्थालंकार के प्रकार

अलंकार किसी प्रकार के चमत्कार पर आधारित होते हैं। ये चमत्कार जिन आधारों पर आधारित हैं। वे निम्नलिखित हैं–

क) साम्यमूलक अर्थालंकार – उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, भ्रम, सन्देह आदि।

ख) वैषम्यमूलक अर्थालंकार – असंगति, विरोधाभास, विशम।

ग) शृंखलामूलक अर्थालंकार – एकावली, कारणमाला।

घ) न्यायमूलक अर्थालंकार – यथासंख्य, तद्गुण, लोकोक्ति आदि।

ङ) कारण-कार्य सम्बन्ध अर्थालंकार – हेतूत्प्रेक्षा, विभावना, अतिषयोक्ति आदि।

च) निषेधमूलक अर्थालंकार – व्यतिरेक, अपह्नति आदि।

छ) गूढ़ार्थ-प्रतीति मूलक अर्थालंकार – समासोक्ति, पर्यायोक्ति, ब्याजजनिन्दा आदि।

9.6 प्रमुख अर्थालंकार

उपमा : अलंकार में उपमा का सर्वाधिक महत्व है। समान धर्म के आधार पर जहाँ किसी एक वस्तु की तुलना या समानता किसी दूसरी वस्तु से की जाती है; वहाँ उपमा अलंकार होता है।

उपमा के चार अंग होते हैं–

BHDC-106.indd 116 19-03-2021 08:51:36

1) **उपमेय** : जिस वस्तु का वर्णन या तुलना की जाए उसे उपमेय कहते हैं।

2) **उपमान** : जिसकी उपमा दी जाए अथवा जिस वस्तु से उपमेय की समानता या तुलना की जाए उसे उपमान कहते हैं।

3) **साधारण धर्म** : उपमेय और उपमान में जो रूप-गुण-कर्म का साम्य दिखाया जाता है, वह धर्म है।

4) **वाचक** : उपमेय और उपमान की समता बताने वाले सादृश्यमूलक शब्द वाचक कहलाते हैं।

उदाहरण – 'हरि पद कोमल कमल से'

इसमें 'हरिपद' का वर्णन किया जा रहा है अतः उपमेय है।

इनकी समता कमल से की गई है अतः कमल उपमान है। इन दोनों के बीच कोमलता का गुण है, अतः साधारण धर्म है तथा 'से' शब्द वाचक है।

उपमा के दो भेद होते हैं–

1) पूर्णोपमा

2) लुप्तोपमा

जिस उपमा में उपमा के चारों अंग प्रत्यक्ष हैं उसे पूर्णोपमा कहते हैं। इन अंगों के लुप्त होने से विभिन्न प्रकार की लुप्तोपमा होती है। लुप्तोपमा में तीन अंगों तक के लोप की कल्पना की गई है जिसमें–

उपमेय लुप्तोपमा, उपमान लुतोपमा, साधारणर्धमलुप्तोपमा, वाचक लुप्तोपमा, मालोपमा।

रूपक : उपमेय पर उपमान का अभेद रूप से आरोप होने को रूपक अलंकार कहते है। उदाहरण–

'ओ चिंता की पहली रेखा
अरे विश्व वन की व्याली
ज्वालामुखी स्फोट के भीषण
प्रथम कम्प-सी मतवाली।'

रूपक के तीन मुख्य भेद हैं–

1) **सर्वागंरूपक** : जहाँ पर उपमान का उपमेय में अंगों सहित आरोप होता है, वहाँ सर्वागंरूपक होता है–

'उदित उदय गिरि मंच पर रघुवर बाल पतंग
विक से सन्त सरोज सब हरशे लोचन भृंग।'

यहाँ मंच, रघुवर, सन्त, लोचन आदि उपमेयों पर बालसूर्य, उदयगिरि, सरोज आदि उपमानों का आरोप किया जाता है अतः सांगरूपक है।

2) **निरंगरूपक** : जहाँ संपूर्ण अंगों का साम्य नहीं, वरन् केवल एक अंग का ही आरोप किया जाता है।

'अवसि चलिय वन राम पहुं भरत मंत्र भल कीन्ह
सोक-सिंधु बूड़त सबहिं, तुम अवलम्बन दीन्ह।

यहाँ सिंधु उपमान का शोक उपमेय में आरोप मात्र है अतः निरंगरूपक है।

3) **परम्परित रूपक** : जहाँ पर प्रधान रूपक एक अन्य रूपक पर आश्रित रहता है और वह बिना दूसरे रूपक के स्पष्ट नहीं होता, वहाँ पर परंपरित रूपक होता है–

'सुनिय वासु गुण ग्राम जासु नाम अध-खगबधिक'

उत्प्रेक्षा : जहाँ उपमेय में उपमान की सम्भावना की जाए वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता है। यह सम्भावना वस्तु रूप में, हेतु रूप में और फल रूप में की जा सकती है। इसके तीन प्रमुख भेद हैं–

वस्तुत्प्रेक्षा, हेतुत्प्रेक्षा एवं फलोत्प्रेक्षा।

वस्तुत्प्रेक्षा : एक वस्तु की दूसरी वस्तु के रूप में संभावना करने की वस्तुत्प्रेक्षा कहते हैं। यथा–

'वाजि बली रघुवंसिन के मनों सूरज के रथ चूमन चाहैं।'

हेतुत्प्रेक्षा : जहाँ अहेतु में अर्थात् जो कारण न हो, उसमें हेतु की संभावना की जाए वहाँ हेतुत्प्रेक्षा होती है। यथा–

'रवि अभाव लखि रैनि में दिन लखि चंद्र विहीन।
सतत उदित इहिं हेतु जनु यश प्रताप मुख कीन।

फलोत्प्रेक्षा : जहाँ अफल में अर्थात् वास्तविक फल न हो उसमें फल की कल्पना की जाती है, वहाँ फलोत्प्रेक्षा होती है जैसे–

'पुहुप सुगन्ध करहिं एहि आसा। मकुहिरकाइ लेहू हम्ह पासा

अतिशयोक्ति : प्रस्तुत को बढ़ा-चढ़ाकर कहने को अतिशयोक्ति अलंकार कहते हैं।

इसके मुख्य पाँच भेद होते हैं– रूपकातिश्योक्ति, भेदकातिशयोक्ति, सम्बन्धातिशयोक्ति, असम्बन्धातिशयोक्ति, कारणातिशयोक्ति।

उदाहरणार्थ– 'अब जीवन की कपि आस न कोय
कनगुरिया की मुदरी कंगना होय।'

यहाँ शरीर की दुर्बलता को बताने के लिए अंगूठी को कंगन होना बताया गया है, अतः अतिशयोक्ति अलंकार है।

सन्देह : जहाँ किसी वस्तु की समानता मालूम न हो पाए कि यह वस्तु वही है या कोई अन्य। यहाँ संदेह अलंकार होता है–

'कैंधो व्योम वीथिका भरे हैं भूरि धूमकेतु
कैंधो चली मेरु तैं कृसानुसरि भारी है।

विभावना : कारण के बिना कार्य का होना वर्णन होने पर विभावना अलंकार होता है। जैसे–

'बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना
कर बिनु करम करइ विधि नाना।

दृष्टान्त अलंकार : जहाँ उपमेय, उपमान और साधारण धर्म का बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव हो वहाँ दृष्टान्त अलंकार होता है। यथा–

'मुनियों की दुर्दशा देख रघुपति घबराये
निज दुख मन से तुरत उन्होंने दूर भगाये
वज्रपात के तुल्य कभी शरपात नहीं है
ग्रीष्मपात-सा दुसह कभी हिमपात नहीं है।

प्रतीप अलंकार : जहाँ उपमान को उपमेय बनाया जाए अथवा उपमेय से उपमान का निरादर कराया जाए, वहाँ प्रतीप अलंकार होता है। प्रतीप का आशय 'उलटा' है। यथा–

'राम रावरे बदन की, सरवरि करत मयंक
ते कबिगन झूठे जगत, लखि मलीस सकलंक।

यहाँ कल्पित उपमेय मयंक के साथ कल्पित उपमान राम मुख की समता ही अयोग्य बतलाई गई है।

अपह्नुति : उपमेय का निषेध करके उपमान की स्थापना करने को अपह्नुति अलंकार कहते हैं। अपह्नुति से तात्पर्य छिपाना' है। यथा–

'मैं जो कहा रघुवीर कृपाला
बन्धु न होई भार यह काला।'

भ्रान्तिमान् : संदेह अलंकार में संदेह बना रहता है परन्तु भ्रान्तिमान् से समानता के कारण एक वस्तु को दूसरी समझ लिया जाता है। इसे भ्रांतिमान अलंकार कहते हैं–

'बिल बिचारि प्रसिवन लग्यौं नाग शुंड में व्याल
ताहू कारी ऊख भ्रम लियो उठाव उताल।'

यहाँ सर्प को हाथी की सूंड में बिल होने की भ्रांति हुई हाथी को भी सर्प में काले गन्ने की भ्रांति हुई।

दीपक अलंकार : जहाँ पर प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत का एक ही धर्म स्थापित किया जाता है वहाँ दीपक अलंकार होता है। यथा–

धाह न पैहैं गंभीर बड़ी है, सदा ही रहे परिपूरन पानी।
एकै विलोकि कै श्रीयुत दास जू होत उभाहिल मैं अनुमानी।
आदि वही मरजाद लिये रहै है जिसकी महिमा जना जानी।
काहू के केहू घटाये घटै नहिं सागर और गुन आगर प्राणी।

उपर्युक्त उदाहरण में 'सागर' और 'गुन आगर प्राणी' में प्रस्तुत-अप्रस्तुतों का 'घटाए घटै नहिं' आदि एक ही धर्म कहा गया है। श्लेष से दोनों के गुण और कार्य एक समान ही हैं।

BHDC-106.indd 119 19-03-2021 08:51:36

दीपक अलंकार के कई भेद होते हैं–

1) कारकदीपक 2) देहलीदीपक 3) मालादीपक 4) आवृत्तिरदीपक

घन में सुन्दर बिजली सी, बिजली में चपल चमक सी।
आँखों में काली पुतली, पुतली में श्याम झलक सी।
प्रतिमा में सजीवता-सी बस गयी सुछवि आँखों में।
थी एक लकीर हृदय में जो अलग रही लाखों में।

यहाँ मालादीपक अलंकार है क्योंकि यहाँ पहले कहे गये घन में, बाद में कहे गये बिजली का, फिर बिजली से बाद में कहे गये चमक से, आँखों से पुतली का और पुतली में श्यामता का अर्थात् इन सभी का एक क्रियारूप धर्म 'बस गई सुछवि आँखों' से संबंध स्थापित किया गया है अतः यहाँ मालादीपक अलंकार है।

प्रतिवस्तूपमा : जहाँ उपमेय और उपमान वाक्यों में विभिन्न शब्दों के भेद से एक ही धर्म का कथन होता है वहाँ पर प्रतिवस्तूपमा अलंकार होता है। उदाहरणार्थ–

मानस में ही स-किशोरी सुख पाती है
चारु चांदनी सदा चकोरी को भाती है
सिंह सुता क्या कभी स्यार से प्यार करेगी?
क्या पर नर का हाथ कुल-स्त्री कभी धरेगी?

यहाँ पर 'क्या पर नर' पंक्ति उपमेहा वाक्य है तथा 'सिंह सुता' पंक्ति उपमान वाक्य है। 'प्यार करेगी', नर का हाथ धरेगी' इनमें एक ही धर्म बताया गया है कि स्त्री अन्य पुरुष से प्रेम नहीं करती है। अतः प्रथम, द्वितीय पंक्ति में उपमेय-उपमान भाव है तथा 'सुख पाना' 'भोर भाना' में एक ही धर्म कहा गया है।

निदर्शना अलंकार : जब कोई बात बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव से समझाई जाती है तब वहाँ निदर्शना अलंकार होता है। इसके मुख्य तीन भेद होते हैं–

1) जब उपमेय और उपमान वाक्यों का अंत में पर्यवसान उपमा में होता है उदाहरणार्थ–

संधि का प्रश्न तो उठता ही नहीं – सोच लें
देशद्रोहियों से संधि। यह आत्मघात है।
चुप बैठ जाना द्रोहियों से संधि करके,
मौगन में सोना है लगा के आग घर में।

2) जहाँ सद् या असद् व्यवहार से सद् अथवा असद् का बोध कराया जाता है, यथा

उदय होत ही जगत को हरत तपनि दुःख द्वंद्व
सबही को सुख दीजिए, बढ़े बतावत चंद
कंटक करि करि परत गिरि, साखा सहस खजूरि।
मरहिं कुनृप करि-करि कुनय, कलि कुचाल भरपूरि।

BHDC-106.indd 120 19-03-2021 08:51:36

3) जहाँ पर जो संभावित या असंभावित व्यापारों में संबंध स्थापित किया जाता है–

अति खीन मृणाल के तारहु ते, तेहि कपर पांव दै आवनो है
यह प्रेम को पंथ करार है री, तरवार की धार पै धारनो है।

अप्रस्तुत प्रशंसा अलंकार : जहाँ अप्रस्तुत का वर्णन, प्रस्तुत के वर्णन के लिए किया जाए, वहाँ अप्रस्तुत प्रशंसा अलंकार होता है अथवा अप्रस्तुत के कथन से प्रस्तुत लक्षित होता हो। उदाहरणार्थ–

'ओ चंद्रमुख ठंडी हवा से सूखता है गेह में
वह धाम में लू से झुलसकर ही मिलेगा खेह में
चम्पाकली सी देह वह क्यों खुरश्वरी भूपर कभी
कब हो सकेगी, सो रही है फूल ऊपर जो अभी।

यहाँ राम द्वारा वन की बाधाओं का वर्णन करके सीता को वनगमन के लिए हतोत्साहित करना यही उल्लेख उपर्युक्त पद्य में मिलता है। इसमें राम द्वारा बाधा कारण पद्य में मिलता है। इसमें राम द्वारा बाधा कारण का उल्लेख अप्रस्तुत है जबकि 'वन न चलो' यह प्रस्तुत कार्य, उपर्युक्त उदाहरण द्वारा बताया गया है।

अर्थान्तरन्यास अलंकार : जहाँ सामान्य कथन के द्वारा विशेष का एवं विशेष से सामान्य का समर्थन किया जाता है वहाँ अर्थान्तरन्यास अलंकार होता है। उदाहरण ार्थ–

'धूरि चढ़ै नभ पौन प्रसंग ते कीच भई जल संगति पाई।
फूल मिलै नृप पै पहुँचै कृमि कंटन संग अनेक विधाई।
चंदन संग कुदारु सुगन्ध है चित प्रसंग लहै करुवाई।
छास जू देखों सारी सब दौरनि, संगति को गुन दोश न जाई।

अथवा

'सुनकर गजों का घोष उसको समझ निज अपयश कथा
उन पर झपटता सिंह-शिशु रोशकर जब सर्वथा।
फिर व्यूह-भेदन के लिए अभिमन्यु उद्यत क्यों न हो
क्या वीर बालक शत्रु का अभिमान सह सकते कहीं?

उपर्युक्त पंक्तियों में 'फिर व्यूह भेदन' की विशेष बात का 'क्या वीर झलक' की सामान्य बात से समर्थन किया गया है, अतः यहाँ अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

व्याजस्तुति अलंकार : जहाँ निन्दा के वाक्यों द्वारा स्तुति एवं स्तुति के वाक्यों द्वारा निन्दा प्रकट होती है, वहाँ व्याजस्तुति अलंकार होता है। उदाहरणार्थ –

'जो वरमाला लिये आपही तुमको बरते आधी हो
अपना तन, मन, धन सब तुमको अर्पण करने आयी हो
मज्जागत लज्जा तजकर भी तिस पर करे स्वयं प्रस्ताव
कर सकते हो तुम किस मन से उससे भी ऐसा बर्ताव।

BHDC-106.indd 121 19-03-2021 08:51:36

यहाँ सीता द्वारा लक्ष्मण को संबोधित करके सूर्पणखा की प्रशंसा की गई है किन्तु शूर्पणखा के मन की वासना एवं पति का भाव रखकर की गई कामना, निन्दा का कारण बनती है अतः यहाँ व्याजस्तुति अलंकार है।

विरोधाभास अलंकार : जब किसी जाति, क्रिया, गुण एवं द्रव्य में वास्तव में विरोध न हो किन्तु विरोध का आभास दिखाई दे तो वहाँ विरोधाभास अलंकार होता है –

अवध को अपनाकर न्याय से। वन तपोवन सा प्रभु ने किया।
भरत ने उनके अनुराग से। भवन में वन का व्रत ले लिया।

एवं

शीतल ज्वाला जलती है, ईंधन होता दृग जल का।
यह व्यर्थ श्वांस चल चलकर, करती है काम अनिल का।

एवं

जिस कुल में है दया सुधा सी क्रोध अनल है।
जिस कुल में है शास्त्र शस्त्र विद्या का बल है।
मैं उसी विप्र-कुल-कमल के लिए बना दीनानाथ हूँ।
तू मुझे न भिक्षुक जानना नरनाथों का नाथ हूँ।

परिसंख्या अलंकार : जब किसी वस्तु को अपने वास्तविक स्थान से गायब करके किसी विशिष्ट स्थान पर आरोपित कर दिया जाता है वहाँ परिसंख्यालंकार होता है। उदाहरणार्थ –

मूलन हो की जहाँ अधोगति केसव गाइय।
होम दुतासन धूम नगर एक मलि नाइय।
दुरगति दुरगन ही जु कुटिल गति सरितन ही में।
श्रीफल को अभिलाष प्रगट कवि कुल के जी में।

अति चंचल जहाँ चल दलै, विधवा बनी न नारि।
मन मोल्यो रितिराज को, अद्‌भुत नगर निहारि।

उन्मीलित : जहाँ पर किसी वस्तु का मीलित अवस्था से फिर प्रकट होना वर्णित होता है वहाँ उन्मीलित अलंकार होता है। उदाहरणार्थ –

दीति न परत समान दुति, कनक-कनक से गात।
भूषण कर करकस लगत, परसि पिछाने जात।
मिलि चन्दन बेंदी रही, गोरे मुख न लखाति।
ज्यों-ज्यों मद लाली चढ़ै, त्यों-त्यों उथटत जाति।
चंपक हखा अंग मिलि अधिक सुहाय।
जाति परै सिव हियरे जब कुंभिलाय।

यहाँ 'दीठि न परत समान' में मीलित तथा 'भूषन कर करकस' में उन्मीलित अलंकार है।

BHDC-106.indd 122 19-03-2021 08:51:37

व्याजोक्ति : जहाँ किसी रहस्य को छिपाने के लिए कोई बहाना बनाया जाए, वहाँ व्याजोक्ति अलंकार होता है। यथा– बैठी हुती ब्रज की बनितान में आइ गयो कहुं मोहन लाल हैं। हवै गई देखते मोदमयी सुनिहाल भई वह वाल रसाल है। रोम उठे तन कांत्यो कहू मुसक्यात लक्ष्यौ सखियान को जाल है। सीरी बयारि बही सजनी उठियों कहि कै उन ओठ्यों जु साल है।

9.7 पाश्चात्य अलंकार

साहित्य और कला का परस्पर सम्बन्ध है। कभी कला ही कविता मानी गई और कभी कला काव्य का उपादान समझी गई। पाश्चात्य-समीक्षा एवं शिक्षा का प्रभाव भी कला पर पड़ा। मानवीकरण अलंकार या Personification विशेषण विपर्यय और ध्वन्यर्थ-व्यंजना नामक पाश्चात्य अंलकारों को आधुनिक कवियों ने अपने काव्य में स्थान दिया।

मानवीकरण (Personification)

भावों में या भावनाओं में, मानवीय गुणों का, उसके कार्यों को आरोपण कराना ही मानवीकरण अलंकार है। इससे भाषा में चमत्कार एवं वक्रता दिखाई देती है जो उसे प्रभावी बनाता है। उदाहरणार्थ –

'हंस देता जब प्रात सुनहले अंचल में बिखरा रोली,
लहरों की बिछलन पर जब मचली पड़तीं किरणें भोली,
तब कलियाँ चुपचाप उठाकर पल्लव के घूंघट सुकुमार
छलकी पलकों से कहती हैं कितनी मादक है संसार।

यहाँ प्रातःकाल का रोली बिखेरना, हंसना, लहरों का मचलना कलियों का घूंघट खोलना आदि मानवीकरण अलंकार है। यहाँ प्रकृति को मानवीय कार्य करते हुए दिखाया गया है।

टायी मोद-पूरिता सोहागवती रजनी चाँदनी का आँचल संभालती सकुचती गोद में खेलाती चंद्र चन्द्रमुख चूमती, झिल्ली एवं गूंजा, चली मानो वन देवियाँ लेन को बलैया निशारानी के सलोने की– वियोगी।

श्रात्रि सुहागन स्त्री सी, चाँदनी का आँचल संभालती आती है। बन देवियों का बलैया लेना आदि प्रकृति में मानवीकरण की उद्भावना करते हैं।

ध्वन्यर्यव्यंजना (Onomatopoeia)

जहाँ शब्दों की ध्वनि के माध्यम से प्रसंग एवं अर्थ का बोध कराया जाता है अथवा एक रूपाकार वंचित की व्यंजना काव्यगत शब्दों की ध्वनि के माध्यम से की जाती है वहाँ ध्वन्यर्थ व्यंजना अलंकार होता है।

उदाहरणार्थ –

'झूम-झूम मृदु गरज-गरज घनघोर राग अमर-अंबर में भर निज रोर
झर-झर-झर निर्झर, गिरि, सर में, घर, मरु, तरु, मर्मर सागर में।
पपीहों की वह पीन पुकार निर्झरों की भारी झर-झर,

झींगुरों की झीनी झनकार घनों की गुरु गंभीर धंहर।
बिंदुओं की छनती छनकार दादुरों के वे दुहरे स्वर,
हृदय हरते थे विविध प्रकार शैल पावस के प्रश्नोत्तर।

विशेषण विपर्यय या विशेषणयत्यय :

जब किसी कथन में विशेषण की जहाँ जगह है वहाँ से अभिधावृत्ति से हटाकर लक्षणा के माध्यम से उसे दूसरी जगह स्थापित करने से काव्य का सौष्ठव बढ़ जाता है, वहाँ विशेषणविपर्यय अलंकार होता है। उदाहरणार्थ –

'जब विमूर्छित नींद से मैं था जगा, कौन जाने किस तरह पीयूष सा एक कोमल समव्यथित निःश्वास था पुनर्जीवन सा मुझे तब दे रहा। यहाँ मूर्च्छित नींद नहीं, जागने वाला व्यक्ति मूर्च्छित है। साथ ही समव्यथित निःश्वार्थ में अमूर्त का मूर्त विधान भी किया गया है।

9.8 सारांश

अलंकार का प्रयोग सौन्दर्य बढ़ाने के लिए होता है। यह सौंदर्य भावों के स्तर पर भी हो सकता है और अभिव्यक्ति के स्तर पर भी। अलंकार द्वारा काव्य की रमणीयता दी जाती है और अभिव्यक्ति को प्रभावशाली भी बनाया जाता है अर्थात् अलंकार भाव-भाषा के भूषण हैं और भाषा में घुलकर उसे अधिक सजीव, प्रभविष्णु एवं झंकृत करने में सहायक होते हैं। अलंकारों का अध्ययन कविता के रूपात्मक पक्ष के अध्ययन में सहायक होता है। अलंकार भावों का उत्कर्ष दिखाने के साथ ही वस्तुओं के, रूपानुभव को; गुणानुभव को और क्रियानुभव को तीव्र करने में सहायक होता है। अलंकार रस-भाव में सहायक होते हैं। उनके प्रभावोत्पादन में समर्थ होते हैं। अतः इसका मानव के मनोविज्ञान से भी गहरा सम्बन्ध है। कविता को सुशोभित करने में अलंकारों का विशेष महत्व होता है। यहाँ शब्दालंकार, अर्थालंकार तथा पश्चिमी काव्यचिंतन में प्रयुक्त अलंकारों के विषय में जानकारी दी गई है जिससे काव्य शोभाकारक तत्व अलंकारों के विभिन्न प्रकारों तथा उनके स्वरूप और उदाहरण के माध्यम से इस विषय से संबंधित ज्ञानवर्धन होगा।

9.9 अवधारणात्मक शब्द

'प्रस्तुत' : जिस वस्तु या व्यक्ति का वर्णन या तुलना की जाय अथवा जो विद्यमान हो उसे प्रस्तुत कहा जाता है अथवा उपमेय।

'अप्रस्तुत' : जिस वस्तु या व्यक्ति की उपमा दी जाय अर्थात जो विद्यमान न हो उसे अप्रस्तुत या उपमान कहा जाता है।

'रूपक' : जहाँ उपमेय और उपमान में भेद रहित आरोप होता है, रूपक अलंकार होता है।

'भ्रांतिमान' : जहाँ समानता के कारण एक वस्तु को दूसरी वस्तु समझ लिया जाता है, वहाँ भ्रांतिमान अलंकार होता है।

'निदर्शना' : जब कोई बात बिंब-प्रतिबिंब भाव से व्याख्यायित होती है तब निदर्शना अलंकार होता है।

BHDC-106.indd 124 19-03-2021 08:51:37

9.10 उपयोगी पुस्तकें

काव्यदर्पण – पं. रामदहिन मिश्र

अलंकार मंजूषा – लाला भगवानदीन

अलंकार पीयूष – रमाशंकर शुक्ल

काव्यसर्वस्व – परमानन्द शास्त्री

काव्यप्रदीप – रामबहोरी शुक्ल

काव्यशास्त्र – डॉ. भगीरथ मिश्र

9.11 बोध प्रश्न

1) अर्थालंकारों का विवेचन कीजिए।

2) प्रमुख पाश्चात्य काव्यालंकारों का परिचय दीजिए।

3) शब्दालंकारों का सोदाहरण वर्णन कीजिए।

9.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1) देखिए भाग 9.5

2) देखिए भाग 9.7

3) देखिए उपभाग 9.4.1

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY